दैनिक जागरण

आलस्य मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है

फिर सिर उठाते नक्सली

बर्बर नक्सलियों ने एक बार फिर अपना खूनी चेहरा दिखाया। इस बार उन्होंने महाराष्ट्र के गढ़चिरौली जिले में पुलिस के त्वरित कार्रवाई दस्ते के एक वाहन को बारूदी सुरंग से उड़ा दिया। इसके चलते 15 जवानों के साथ एक वाहन चालक वीरगति को प्राप्त हुआ। बीते कुछ समय से नक्सली जिस तरह नए सिरे से सिर उठाते दिख रहे हैं वह गंभीर चिंता का कारण बनना चाहिए-न केवल नक्सल ग्रस्त राज्यों के लिए, बल्कि केंद्र सरकार के लिए भी। इसके पहले छत्तीसगढ़ में भाजपा के एक विधायक के वाहन को इसी तरह बारूदी सुरंग से उड़ा दिया गया था। इससे थोड़ा और पहले छत्तीसगढ़ में ही बीएसएफ के चार जवानों को निशाना बनाया गया था। नक्सलियों की ओर से रह-रहकर अंजाम दी जा रही इस तरह की खूनी घटनाएं यही बताती हैं कि वे आंतरिक सुरक्षा के लिए अभी भी गंभीर खतरा बने हुए हैं। एक आंकड़े के अनुसार बीते पांच वर्षों में करीब तीन सौ जवान नक्सलियों का निशाना बन चुके हैं। गढ़चिरौली की वारदात पुलवामा की आतंकी घटना की याद दिला रही है। यह आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है कि नक्सलियों की बेलगाम हिंसा को आतंकी वारदात के तौर पर न केवल देखा जाए, बल्कि उनसे वैसे ही निपटा जाए जैसे आतंकियों से निपटा जा रहा है। आखिर जब आतंकियों के खिलाफ सुरक्षा बलों को खुली छूट दी जा सकती है तो नक्सलियों के खिलाफ भी ऐसा क्यों नहीं किया जा सकता? सच तो यह है कि जरूरत महसूस होने पर नक्सलियों के खिलाफ सेना का भी इस्तेमाल करना चाहिए। यह कहना समस्या का सरलीकरण करना है कि नक्सली भटके हुए लोग हैं। वे भटके हुए लोग नहीं, नृशंस हत्यारे और निर्मम लुटेरे हैं। वे गरीबों के नाम पर उगाही के साथ खूनी खेल खेलने में लगे हुए हैं। उनके प्रति नरमी दिखाना जानबूझकर खतरा मोल लेना है।

गढ़चिरौली की घटना यह बता रही है कि नक्सलियों की सही तरह से घेरेबंदी नहीं हो पा रही है। माना कि वे छत्तीसगढ़ के ऐसे दुर्गम इलाके में छिपे रहते हैं जहां से आसानी से पड़ोसी राज्यों में खिसक जाते हैं, लेकिन संबंधित राज्यों की पुलिस के तालमेल से ऐसे जतन किए जा सकते हैं जिससे उनकी लुकाछिपी पर लगाम लग सके। हालांकि बीते कुछ समय में नक्सल प्रभावित जिलों की संख्या में उल्लेखनीय कमी आई है, लेकिन यह ठीक नहीं कि नक्सली अभी भी बेलगाम बने हुए हैं। इसका कोई मतलब नहीं कि एक-डेढ़ दशक से यही सुनने को मिल रहा है कि नक्सलियों की कमर टूटने वाली है। आखिर उनके दुस्साहस का पूरी तौर पर दमन कब होगा? निःसंदेह इस सवाल का भी जवाब मिलना चाहिए कि नक्सली बार-बार एक ही तरह से सुरक्षा बलों को निशाना बनाने में सक्षम क्यों हैं? यह चिंताजनक है कि वे सतर्कता में कमी का लाभ उठाकर बारूदी सुरंगों का इस्तेमाल करने में समर्थ बने हुए हैं। गढ़चिरौली में त्वरित कार्रवाई दस्ते को निशाना बनाने के एक दिन पहले नक्सलियों ने सड़क निर्माण में लगे उपकरणों में आगजनी की थी। स्पष्ट है कि जरूरत केवल सतर्कता बढ़ाने की ही नहीं, बल्कि नक्सलियों पर निर्णायक प्रहार करने की भी है।

विकास के वाहक

यह बताने की जरूरत नहीं कि किसी भी समाज, देश, संस्था और उद्योग में मजदूरों, कामगारों और मेहनतकशों की भूमिका कितनी अहम होती है। झारखंड के परिपेक्ष्य में यह बात सबसे ज्यादा सटीक बैठती है। धनबाद, जमशेदपुर, रांची, साहिबगंज, पाकुड़, रामगढ़, हजारीबाग समेत प्रदेश के लगभग सभी जिले जो खनन क्षेत्र से जुड़े हैं, हर जगह मजदूरों की भूमिका साफ-साफ दिखाई देती है। कामगारों के बिना न कोई औद्योगिक ढांचा खड़ा हो सकता है, न खदानें चल सकती हैं, न रोजमर्रा के कार्य हो सकते हैं। बात धनबाद, रामगढ़, बोकारो के कोयला खदानों की करें या पश्चिम एवं पूर्वी सिंहभूम के लौह अयस्क खदानों की या लोहरदगा के बॉक्साइट खनन की, यह पूरा क्षेत्र मजदूरों पर ही निर्भर हैं। पाकुड़, कोडरमा, साहिबगंज में पत्थर खनन के लिए मजदूरों की जरूरत पड़ती ही है। झारखंड खदानों, उद्योगों का प्रदेश है। यहां के विकास में मजदूर हर कदम पर खड़े मिलते हैं। अगर कालांतर में जाएं तो पता चलता है कि अंतरराष्ट्रीय मजदूर दिवस मनाने की शुरुआत 1 मई 1886 से हुई थी। इस दिन अमेरिका की मजदूर यूनियनों ने काम का समय आठ घंटे से ज्यादा न रखने के लिए हड़ताल की थी। इस दौरान शिकागो में बम धमाका भी हुआ था। पुलिस ने मजदूरों पर ही गोली चला दी जिसमें सात मजदूर मारे गए थे। परिणाम यह हुआ कि इस घटना के कुछ समय बाद अमेरिका में मजदूरों के लिए काम करने का समय आठ घंटे निश्चित कर दिया गया। भारत में चेन्नई में 1923 में मई दिवस मनाने की शुरुआत की गई। भारतीय मजदूर किसान पार्टी के नेता कामरेड सिंगरावेलू चेट्यार ने इसे शुरू किया था। मद्रास हाई कोर्ट के सामने प्रदर्शन कर सहमति बनाई गई कि 1 मई को कामगार दिवस के रूप में मनाया जाए और इस दिन छुट्टी हो। आज भारत समेत लगभग 80 मुल्कों में यह दिवस मनाया जाता है। श्रमिक संगठन समेत तमाम नेताओं को यह प्रण लेना चाहिए कि मजदूरों के हितों की अनदेखी किसी भी शर्त पर न हो। सिर्फ राजनीतिक लाभ लेने के लिए उनका इस्तेमाल न हो, बल्कि उनके बुनियादी सुविधाओं समेत अन्य समस्याओं पर गहन चिंतन कर उनका समाधान ढूंढा जाए।

अस्मिता की नई राजनीति

प्रदीप सिंह

वंचित वर्ग की अस्मिता की इस नई राजनीति में राष्ट्रीय अस्मिता, सांस्कृतिक अस्मिता, दलित अस्मिता और अति पिछड़े वर्गों की अस्मिता भी समाहित हो गई है

दुनिया भर में अस्मिता की राजनीति का प्रचलन है। भारत में जाति व्यवस्था के कारण शायद ज्यादा ही। पिछले 70 सालों की बात करें तो जातीय अस्मिता का भारतीय राजनीति पर सबसे ज्यादा प्रभाव रहा है। जातीय अस्मिता की राजनीति लंबे समय से राजनीति में सफलता की कुंजी रही है। अब खत्म हो गई हो, ऐसा नहीं है। इसका स्वरूप बदलता रहता है। जाति के साथ ही धार्मिक अस्मिता भी चुनावी राजनीति में अहम भूमिका निभाती रही है, लेकिन पिछले पांच सालों में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अस्मिता की एक नई राजनीति शुरू है। यह है समाज के वंचित वर्ग की अस्मिता। अमूमन होता यह है कि पार्टी अस्मिता की राजनीति शुरू करती है और सत्ता में आने पर सरकार उसे सुदृढ़ करने का काम करती है, लेकिन पिछले पांच सालों में गंगा उलटी बही है। पीएम मोदी ने केंद्र सरकार की योजनाओं के जरिये वंचित वर्ग की अस्मिता की राजनीति शुरू की और भाजपा अध्यक्ष अमित शाह ने संगठन के जरिये इसे सुदृढ़ करने का काम किया। अस्मिता की इस राजनीति का ध्येय वाक्य है 'सबका साथ, सबका विकास।' यह महज एक राजनीतिक नारा नहीं है। यह नारा ठोस वैचारिक धरातल पर खड़ा है। साल 2014 में सत्ता में आने के बाद संसद में अपने पहले भाषण में प्रधानमंत्री ने जब कहा कि उनकी सरकार देश के गरीबों, पिछड़ों, दलितों, आदिवासियों और समाज के वंचित वर्ग के लिए काम करेगी तो इसे एक राजनीतिक शब्दाडंबर के रूप में देखा गया। उस समय ऐसे लोगों की कमी नहीं थी जिनका यह मानना था कि यह सरकार कारपोरेट घरानों के मुताबिक चलेगी। यह भी कि मंत्रिमंडल में ऐसे ही लोगों का बोलबाला होगा, लेकिन जल्दी ही उनका भ्रम टूट गया। सरकारें आम तौर पर अर्थव्यस्था की विकास दर बढ़ने से संतुष्ट हो जाती हैं। मान लिया जाता है कि अर्थव्यवस्था बढ़ेगी तो सबको फायदा होगा। मोदी सरकार ने इससे परे देखने का फैसला किया।

एक ऐसे समय जब बुद्धिजीवियों, अर्थशास्त्रियों और राजनीतिक पंडितों का एक वर्ग सरकार से किसी 'बिग बैंग' सुधार की उम्मीद कर रहा था, तब मोदी ने वंचित वर्ग की अस्मिता का विमर्श खड़ा करने के लिए अपनी सरकार के कार्यक्रम तय किए। कुछ ऐसा जो बहुत बड़ा न हो पर इतना बड़ा जरूर हो कि सामाजिक, आर्थिक तौर पर हाशिये पर खड़े व्यक्ति को लगे कि उसके जीवन में कुछ सुधार आया है। कार्यक्रम हो तो सबके लिए, लेकिन इस वर्ग के लोगों को लगे कि यह व्यक्तिगत रूप से उसके लिए बना है। इसकी शुरुआत हुई रसोई गैस के मुफ्त कनेक्शन की योजना उज्ज्वला से। एक मई 2015 को उत्तर प्रदेश के बलिया से शुरू हुई इस योजना के तहत सात करोड़ से ज्यादा परिवारों के घर में रसोई गैस का मुफ्त कनेक्शन पहुंच चुका है। इसके बाद स्वच्छ भारत योजना के तहत करीब नौ करोड़ से ज्यादा घरों में शौचालय का निर्माण किया गया है। इसके बाद पहले हर गांव और फिर हर घर तक बिजली पहुंचाने का लक्ष्य, प्रधानमंत्री आवास योजना और आयुष्मान योजना। दस करोड़ परिवारों को सालाना पांच लाख रुपये तक के मुफ्त इलाज की आयुष्मान योजना के बाद आई 12 करोड़ किसान परिवारों के लिए किसान सम्मान निधि योजना। इन सब योजनाओं ने मोदी सरकार के प्रति लोगों का नजरिया बदल दिया। गरीब या समाज का वंचित तबका एक वर्ग के रूप में तो हमेशा से था, लेकिन गरीबी या अभाव के अलावा उसे जोड़ने वाला कोई और तत्व नहीं था। अपनी जन कल्याणकारी योजनाओं के जरिये मोदी सरकार ने इस वर्ग को एकत्र होने का एक आधार दिया। ये ऐसी योजनाएं हैं जो ठोस रूप में उसके सामने उपस्थित हैं। यह आभासी दुनिया नहीं वास्तविक दुनिया है। जो चीजें, सुविधाएं कभी उसकी कल्पना का हिस्सा हुआ करती थीं, वे मूर्त रूप में उसके अपने जीवन, अपने घर में आ गईं। इससे आए बदलाव को ज्यादातर लोग या तो देखने को तैयार नहीं हैं या देखकर भी इसे पहले की ही तरह की सरकारी योजनाओं में कुछ और योजनाओं के इजाफे के रूप में देख रहे हैं। ये योजनाएं कोई वादा नहीं हैं।

अवधेश राजपूत

बिजली के अलावा और कोई योजना नहीं है जिसका 2014 के चुनाव में पार्टी या पार्टी के प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार नरेंद्र मोदी ने वादा किया था। मोदी पांच साल में सितारे जमीं पर तो नहीं लाए पर ये योजनाएं जमीन पर जरूर लागू कर दी हैं और सात दशकों की आदत के मुताबिक इन्हें पाने के लिए समाज के इस वर्ग को किसी को रिश्वत देने की जरूरत (ज्यादातर मामलों में) नहीं पड़ी। यह उनके लिए कल्पनातीत है। इन योजनाओं का लाभ उनके लिए गूंगे के गुड़ के स्वाद जैसा है। वंचित वर्ग की अस्मिता की इस राजनीति के साथ राष्ट्रीय सुरक्षा और राष्ट्रवाद के मुद्दे का सबसे ज्यादा असर भी इसी तबके पर पड़ा है। भाजपा के राजनीतिक विरोधियों को पार्टी का, 'मोदी है तो मुमकिन है' का नारा महज चुनावी नारा लग सकता है, लेकिन इस वर्ग के लिए यह निजी अनुभव से उपजी हुई अनभूति है। उसे लग रहा है कि यह प्रधानमंत्री ऐसा है जो उनके बारे में सोचता ही नहीं, करता भी है। इन पांच सालों में फर्क यह आया है कि साल 2014 में नरेंद्र मोदी से देश के लोगों को उम्मीद थी। आज जब मोदी और उनकी सरकार फिर से जनादेश हासिल करने के लिए जनता के दरबार में है तो लोगों को उन पर विश्वास है। इस विश्वास की वजह से ही विपक्ष कोई राष्ट्रीय विमर्श खड़ा कर पाने में अभी तक सफल नहीं हुआ है।

यह याद करना कठिन है कि 1952 के बाद कोई ऐसा लोकसभा चुनाव हुआ हो जब भ्रष्टाचार मुद्दा न रहा हो। आजादी के बाद दूसरे आम चुनाव से पहले जवाहरलाल नेहरू सरकार के खिलाफ जीप घोटाले का मुद्दा उठ चुका था। विपक्ष को यह बात समझ में आ रही है। यही कारण है कि राहुल गांधी राफेल का एक नकली विमर्श खड़ा करने की नाकाम कोशिश कर रहे हैं। इस मुद्दे पर आम लोगों की तो छोड़िए, विपक्ष के बाकी दलों को ही भरोसा नहीं है, लेकिन इस विमर्श को किसी भी तरह और किसी भी कीमत पर खड़ा करने की कोशिश में उन्होंने सुप्रीम कोर्ट तक को लपेट लिया, जहां उन्हें माफी मांगनी पड़ रही है।

वंचित वर्ग की अस्मिता की इस नई राजनीति में राष्ट्रीय अस्मिता, सांस्कृतिक अस्मिता, दलित अस्मिता और अति पिछड़े वर्गों की अस्मिता भी समाहित हो गई है। साल 2014 में यह वर्ग मोदी की ओर उम्मीद से देख रहा था। वह मंडल की राजनीति से उभरी राजनीति के दौर में ठगा गया महसूस करता है। सामूहिक रूप से संख्या में ज्यादा होने के बावजूद अकेले-अकेले उसकी संख्या कम है। 2014 के बाद उसने 2017 में उत्तर प्रदेश में एक बार फिर भाजपा का साथ दिया। इस चुनाव में वह भाजपा सरकार की केंद्रीय योजनाओं का ब्रांड अंबेडकर बन गया है। भाजपा का झंडा उसने बहुत मजबूती से उठा रखा है।

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

एक ही मुद्दा–एक ही नाम

निरंजन कुमार

लोकसभा चुनाव एक तरह से 'मोदी लाओ' अथवा 'मोदी हटाओ' पर ही केंद्रित होकर रह गए हैं

मतदान के चार चरण पूरे होने के साथ ही लोकसभा चुनाव के लिए प्रचार अपने चरम पर आ चुका है। चुनावी मैदान में राजनीतिक दल विभिन्न मुद्दों की रणभेरी बजा रहे हैं, लेकिन जाने-अनजाने एक ही मुद्दा सब मुद्दों के केंद्र में है और वह है नरेंद्र मोदी। पूरा चुनाव एक तरह 'मोदी लाओ' अथवा 'मोदी हटाओ' पर केंद्रित हो गया है। नरेंद्र मोदी के व्यक्तित्व और नेतृत्व को लेकर बौद्धिक-राजनीतिक जगत दो फाड़ है। एक तरफ कुछ लोग आशंकित हैं तो दूसरी ओर अनेक लोग बहुत ही उत्साहित हैं। मोदी सरीखे किसी नेतृत्व की सीमाओं और लाभ को समझने के लिए प्रसिद्ध जर्मन समाजशास्त्री मैक्स वेबर के राजनीतिक नेतृत्व संबंधी विचारों को जानना प्रासंगिक होगा। मैक्स वेबर ने कहा था कि राज्य को नियंत्रित करने वाले राजनीतिक नेतृत्व तीन प्रकार के होते हैं-पारंपरिक प्राधिकारी, करिश्माई प्राधिकारी और तर्कसंगत-कानूनी प्राधिकारी। पारंपरिक प्राधिकारी अपनी वैधता परंपरा से प्राप्त करता है यानी लंबे समय से स्थापित रिवाज, आदतें और सामाजिक संरचनाओं के आधार पर सत्ता पीढ़ीगत हस्तांतरित होती है। वंशानुगत राजाओं का शासन इसका उदाहरण है। दूसरी ओर करिश्माई प्राधिकारी या नेता अपने करिश्म अर्थात विशिष्ट गुणों और उच्च क्षमता के आधार पर वैधता एवं सत्ता हासिल करता है। तीसरे, तर्कसंगत-कानूनी प्राधिकारी जो राज्य के कानून-संविधान पर वैधता के लिए निर्भर होते हैं। वेबर के अनुसार अधिकांश आधुनिक समाज कानूनी- तर्कसंगत प्राधिकार पर निर्भर है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में खास तौर से वर्तमान संदर्भों में देखें तो वेबर के राजनीतिक नेतृत्व अथवा प्राधिकार के सिद्धांत को पूरी तरह से लागू किया नहीं जा सकता। आधुनिक भारतीय राज्य और राजनीतिक प्राधिकार निःसंदेह अपनी वैधता कानून-संविधान से ग्रहण करता है और इस रूप में तर्कसंगत यानी कानूनी है, लेकिन इसके साथ-साथ पारंपरिक एवं करिश्माई नेतृत्व-प्राधिकार भी आधुनिक भारत में क्रियाशील है। यद्यपि वेबर के अनुसार पारंपरिक नेतृत्व वंशानुगत राजाओं का शासन होता है और आधुनिक समाजों में प्रायः इसके लिए जगह नहीं, लेकिन भारतीय परिवेश में संवैधानिक राज्य होने के बावजूद पारंपरिक नेतृत्व अब भी बरकरार है, जहां वंशानुगत शासन या वंशवाद ही प्रधान होता है। कांग्रेस पार्टी, समाजवादी पार्टी, राष्ट्रीय जनता दल, शिव सेना, अकाली दल, झारखंड मुक्ति मोर्चा आदि इसके उदाहरण हैं। लोकतंत्र-संवैधानिक शासन के बावजूद इन राजनीतिक दलों में नेतृत्व एक ही परिवार और उनके भाई-भतीजों के कब्जे में बरकरार है। इसी राह पर अब मायावती की बहुजन समाज पार्टी और ममता बनर्जी की तृणमूल कांग्रेस भी चल पड़ी है। पारंपरिक नेतृत्व अथवा वंशवाद-परिवारवाद के लिए अपना परिवार और उससे जुड़े हुए कुछ लोगों का हित ही सर्वोपरि होता है। चुनाव जीतने की मजबूरी में कुछ जनहितकारी काम उन्हें जरूर करने पड़ते हैं, लेकिन उनकी प्राथमिकता जनहित न होकर परिवार-हित ही होता है। पारंपरिक नेतृत्व की एक अन्य सीमा यह भी है कि उत्तराधिकारी चाहे नेतृत्व-गुण से हीन हो तो भी सत्ता उसे ही मिलेगी। जनता का दुख-दर्द, उसकी आशाओं-आकांक्षाओं को समझने वाले जमीन से उठे सच्चे जननायकों के लिए वंशवादी नेतृत्व वाली पार्टियों में ज्यादा गुंजाइश नहीं होती। इसलिए ऐसा नेतृत्व और पार्टियां आम जनता के लिए लाभकारी नहीं होतीं। इसका एक प्रमाण यह है कि आज कई राजनीतिक दलों का नेतृत्व उन हाथों में है जो एक समय कांग्रेस का हिस्सा थे। ममता बनर्जी, शरद पवार आदि इसके उदाहरण हैं कि कांग्रेस में किस तरह उनके लिए स्थान नहीं रह गया था।

वेबर के मॉडल में राजनीतिक नेतृत्व का तीसरा प्रकार करिश्माई नेतृत्व और प्राधिकार है। हालांकि वेबर के अनुसार करिश्माई राजनीतिक नेतृत्व अक्सर अधिनायकवादी, स्वेच्छाचारी राज्यों या तानाशाही अथवा धर्मतंत्र में पाया जाता है। अपने करिश्माई अधिकार को बनाए रखने के लिए एक भव्य और प्रभावशाली पर्सनैलिटी कल्ट बनाया जाता है। आज के भारतीय राजनीतिक विमर्श में मोदी का नेतृत्व और पर्सनैलिटी कल्ट चर्चा में है जिसे लेकर तथाकथित बुद्धिजीवियों का एक वर्ग दुबला हुआ जा रहा है। इसे लेकर कुछ लोगों की यह आशंका निर्मूल है कि इससे लोकतंत्र और देश को खतरा है। एक खास तरह के चश्मे से देखने के आदी ये लोग यह भूल जाते हैं कि मोदी किसी अधिनायकवादी अथवा तानाशाही राज्य में न होकर एक लोकतांत्रिक संविधान द्वारा परिचालित राज्य में सक्रिय हैं। यह भी ध्यान रहे कि भारत जैसे विशाल देश में इंदिरा गांधी वाली गलती दोहराना आज मुमकिन नहीं। गौरतलब है कि मोदी अपने करिश्मे का उपयोग अपने घर-परिवार या अपने से जुड़े दरबारियों के लिए दौलत का अंबार लगाने के लिए नहीं कर रहे हैं। अगर यही करना होता तो 2014 के प्रचंड बहुमत और अपनी लोकप्रियता के आधार पर वह ऐसा कुछ करने का प्रयास कर चुके होते।

इसके विपरीत मोदी ने जनकल्याण की तमाम योजनाएं शुरू कीं। ये योजनाएं गरीबों, मजदूरों और किसानों के हितों के लिए थीं। आज यदि गरीबों के बीच कोई नेता सबसे अधिक लोकप्रिय है तो वह शायद मोदी ही हैं। गरीबों को यह भरोसा भी है कि जो नहीं हो सका है उसे मोदी ही पूरा कर सकते हैं। मोदी संवैधानिक सीमाओं में रहकर अपने सक्षम नेतृत्व और प्रशासनिक कौशल से देश को सक्षम, सशक्त और सर्वजन हिताय-सर्वजन सुखाय वाली सरकार देने का काम कर रहे हैं। हालांकि यह सही है कि मोदी इस करिश्मे का उपयोग जनमत को अपने लिए अनुकूल करने एवं चुनाव जीतने के लिए भी करते हैं, लेकिन करिश्माई नेतृत्व और पर्सनैलिटी कल्ट का उपयोग गांधी, आंबेडकर से लेकर नेहरू अथवा भारत के बाहर नेल्सन मंडेला, आंग सान सू की आदि ने भी किया है। दिलचस्प यह भी है कि मोदी के पर्सनैलिटी कल्ट के निर्माण में उनके राजनीतिक विरोधियों, तथाकथित बुद्धिजीवियों और मीडिया के एक हिस्से की अहम भूमिका है। अंध विरोध से ग्रस्त होकर इन लोगों ने अनर्गल और आधारहीन आरोप लगाकर ब्रांड मोदी को और मजबूत ही किया है। यह सही है कि मोदी अपने सभी वादे पूरे नहीं कर पाए, लेकिन एक बड़े वर्ग की नजर में मोदी ही वह नेता हैं जो देश की आर्थिक, सामाजिक और सामरिक सुरक्षा की गारंटी हैं। शायद यही कारण है कि विपक्षी दल उन मुद्दों को उठाने से बच रहे हैं जिन पर मोदी बीते पांच साल में अपेक्षा के अनुरूप काम नहीं कर सके।

(लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

अर्थ

चार पुरुषार्थों-धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में अर्थ का महत्वपूर्ण स्थान है। अर्थ का धर्म से संबंध है। श्रेय कल्याण मार्ग है और प्रेय भोगमार्ग। श्रेय एवं प्रेय को प्राप्त करने के लिए अर्थ आवश्यक है। धर्म के अनुकूल अर्थ का उपार्जन और धर्मानुकूल अर्थ का व्यय मोक्ष की प्राप्ति में किसी संबल से कम नहीं है। अर्थ के उपार्जन और उसकी रक्षा में कष्ट होता है। परिश्रम से अर्थ मिलता है। गलत ढंग से उपार्जित अर्थ अनर्थ का कारण बनता है। कठोर श्रम से प्राप्त अर्थ का ही दान फलदायक है। शास्त्रों के अनुसार प्राप्त हुए अर्थ का संग्रह करना और उसे भोग में लगाना ठीक नहीं है। धर्म के पालन से प्राप्त अर्थ ही सच्चा और श्रेष्ठ धन है। न्याय से प्राप्त धन की न्यायपूर्वक वृद्धि करना उत्कृष्ट है। धन को धर्मार्थ कार्यों में लगाने की जरूरत है।

अर्थ के उपार्जन, संवर्द्धन, रक्षा, व्यय और उपभोग में अनवरत भय, चिंता, श्रम और भ्रम से संघर्ष करना पड़ता है। अविश्वास, भेदबुद्धि, अहंकार, गर्व, क्रोध, झूठ, दंभ, हिंसा और चोरी आदि 15 अनर्थों का कारण अर्थ ही है। कल्याण (श्रेय) चाहने वाले लोगों को अर्थ का इस्तेमाल परोपकार के लिए करना चाहिए। माता-पिता-पुत्र, भाई और सगे-संबंधी स्नेह बंधन में बंधे रहने के बाद भी केवल अर्थ के कारण ही परस्पर शत्रु हो जाते हैं। साधुता और अर्थ में समन्वय नहीं रहता। जो अर्थ के पीछे पड़े रहते हैं, उनमें साधुता दुर्लभ होती है। द्वेष से अर्थ की प्राप्ति होती है। यह एक शाश्वत सत्य है कि इस प्रकार से प्राप्त अर्थ कुछ समय बाद प्रतिकूल बन जाता है। अर्थ कभी किसी एक के पास स्थिर नहीं रहता। अर्थ का उपयोग परोपकार आदि कल्याणकारी कार्यों में करने पर दुख कम होता है।

ऐसा नहीं कि अर्थ के संग्रह का महत्व नहीं है, लेकिन एक सीमा तक ही संग्रह की प्रवृत्ति को स्वीकार किया गया है। अर्थ संग्रह की प्रवृत्ति दूसरों के अधिकारों को छीनकर ऐश्वर्यवान बनाकर सामाजिक मान-प्रतिष्ठा का कारण बनने पर निंदनीय बन जाती है। अंतर्मन की पुकार को अनसुना कर अर्थ संग्रह करने की प्रवृत्ति व्यक्ति को लोभी बनाती है। धन बढ़ाने में आंखों का पानी सूख जाता है। लोभ अनिष्ट करता है। श्रम के बगैर प्राप्त अर्थ कभी सद्बुद्धि नहीं बढ़ाता। अर्थ की अधिकता अनर्थ का कारण है। दुर्लभ मानव-तन न्याययुक्त अर्थ से संवर्द्धित होता है।

डॉ. हरिप्रसाद दुबे

खोजना होगा जल संकट का समाधान

देवेंद्रराज सुथार

संपूर्ण विश्व में पानी की किल्लत वाले स्थानों में रहने वाले लोगों की संख्या चार अरब है

बरसात आने से पहले ही देश के कई इलाकों में भीषण गर्मी के कारण जल संकट मंडराने लग गया है। मौसम विभाग ने मार्च-अप्रैल महीनों में होने वाली बारिश में 27 फीसद की कमी रिकॉर्ड की है। भारत में 42 फीसद जमीन सूखे की मार झेल रही है। वहीं पिछले दिनों विश्व जल दिवस पर ब्रिटेन के एक गैर सरकारी संगठन वॉटर एड ने अपनी रिपोर्ट बिनीथ द सर्फेस में दावा किया है कि भारत में एक अरब आबादी जल संकट का सामना कर रही है। संपूर्ण विश्व में पानी की किल्लत वाले स्थानों में रहने वाले लोगों की संख्या चार अरब है। भारत में 60 करोड़ लोग पानी की अत्यधिक किल्लत वाले क्षेत्रों में रहते हैं। यह तादाद 2050 तक 5 अरब का आंकड़ा पार कर लेगी। वर्ष 2040 तक ऐसी आशंका है कि मध्य पूर्व, अधिकांश उत्तरी अफ्रीका, पाकिस्तान, तुर्की, अफगानिस्तान और स्पेन समेत 15 देशों में पानी की अत्यधिक किल्लत हो जाएगी। भारत, चीन, दक्षिण अफ्रीका, अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया समेत कई देशों में पानी की अधिक कमी होगी।

वैश्विक भूमिगत जल की कमी वर्ष 2000 से 2010 के बीच बढ़कर करीब 22 फीसद हो गई है। लेकिन उसी अवधि में भारत में भूमिगत जल की किल्लत 23 फीसद पहुंच गई है। रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत सबसे अधिक भूमिगत जल का उपयोग करता है। विश्व के कुल भूमिगत जल का 24 फीसद हिस्सा भारत इस्तेमाल करता है। इतना ही नहीं, भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा भूमिगत जल का निर्यातक देश है। यह पूरे विश्व का 12 फीसद है। परंतु बढ़ती आबादी तथा व्यावसायिक योजनाओं के कारण जल की मांग बढ़ती जा रही है तथा जलापूर्ति के स्रोत दिन-प्रतिदिन घटते जा रहे हैं। गौरतलब है कि पूरे विश्व में धरती का लगभग तीन चौथाई भाग जल से घिरा हुआ है, किंतु इसमें से 97 प्रतिशत पानी खारा है जो पीने योग्य नहीं है, पीने योग्य पानी की मात्रा सिर्फ 3 प्रतिशत है। इसमें भी 2 प्रतिशत पानी ग्लेशियर एवं बर्फ के रूप में है। इस प्रकार सही मायने में मात्र 1 प्रतिशत पानी ही मानव के उपयोग के लिए उपलब्ध है। भारत में एक अरब आबादी का जल संकट के दौर से गुजरने की वजह जनसंख्या में बढ़ोतरी, जल, जमीन एवं जंगल जैसे आधारभूत प्राकृतिक संसाधनों का दोहन एवं वनों की अंधाधुंध कटाई हैं।

यह चिंताजनक है कि भारत जैसे देश में जहां वृक्षों की पूजा की परंपरा रही है वहां आज केवल 11 प्रतिशत वन ही सुरक्षित रह गए हैं। जबकि यूरोप, अमेरिका जैसे विकसित देश इस मामले में हमसे कई गुना आगे हैं। भारत की प्रमुख समस्या यह है कि वह पानी की बचत कम और बर्बादी अधिक करता है। देश में जल संकट का कारण जल को लेकर कुप्रबंधन भी है। आवास और शहरी विकास मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार भारत के दो सौ शहरों में बेकार पड़े जल स्रोतों के प्रबंधन की ओर शीघ्र ध्यान देने की जरूरत है। आज जल संबंधी सिद्धांतों का व्यापक ढांचागत कानून तैयार कर वर्तमान हालातों के अनुसार एक नई राष्ट्रीय स्तर की जल नीति बनाने की आवश्यकता है। साथ ही निरंतर बढ़ते जल संकट से निपटान के लिए हर नागरिक को जागरूक को होकर इस समस्या का समाधान खोजना होगा।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

निरंतर चरित्र-हनन

राजीव सचान ने अपने लेख 'चिंतित करने वाला बौद्धिक चिंतन' में लिखा है कि नरेंद्र मोदी के वाराणसी रोड-शो में उमड़ी भीड़ में कांग्रेस और उसके समर्थक नेताओं को हिटलर के पक्ष में उमड़ने वाली भीड़ जैसी सादृश्यता दिख रही है। यही नहीं, कांग्रेस के सोशल मीडिया विभाग ने एक चित्र छापा है, जिसमें हिटलर और मोदी छोटे बच्चे के कानों को एक ही तरीके से उमेठ रहे हैं। यह एक कृत्रिम रूप से बनाया चित्र है जिससे जर्मन तानाशाह और मोदी को एक-सा दिखाया जा सके। भाजपा, उसके पहले जनसंघ और उसके भी पूर्व संघ को फासिस्ट के रूप में चित्रित करने के काम में कांग्रेस के शीर्ष परिवार ने कोई कसर नहीं उठा रखी है। आरएसएस के संस्थापक के विषय में नेहरू ने प्रचार किया कि वह यूरोप जाकर हिटलर-मुसोलिनी से मिले थे, जबकि वास्तविकता यह है कि उन्होंने जीवन भर देश से बाहर कदम नहीं रखा। इंदिरा गांधी ने एक बार लोकसभा में कहा था कि अटल बिहारी वाजपेयी हिटलर के ही समान हाथ उठाकर बोलते हैं। इस पर अटल जी ने कहा था कि हाथ उठाकर ही बोला जा सकता है, पैर उठाकर नहीं। उन्हीं दिनों इंदिरा गांधी ने विपक्ष, खास तौर पर जनसंघ एवं स्वतंत्र पार्टी पर सीआइए का एजेंट होने का आरोप मढ़ा था। वास्तव में अमेरिकी राजदूत पैट्रिक मोयनिहन ने कहा था कि सीआइए ने इंदिरा गांधी को नियमित रूप से पैसा दिया था। इस आरोप से विचलित इंदिरा ने मुख्य विपक्ष को उक्त आरोप की जद में ले लिया। इन आरोपों-प्रत्यारोपों के बीच सत्य की खोज कठिन हो जाती है, सामान्य व्यक्ति ठगा-सा महसूस करता है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है। देश में ऐसी झूठी राजनीति नहीं होनी चाहिए।

अजय मित्तल, मेरठ

मेलबाक्स

एवरेस्ट भी कचरे से पटा

समूचे उत्तर भारत की सैकड़ों छोटी-बड़ी नदियों के उद्गम स्थल हिमालय के उच्चतम शिखर माऊंट एवरेस्ट पर मानव की आवाजाही अब एक साधारण पर्यटन स्थल की तरह होने लगी है। एक रिपोर्ट के अनुसार पिछले वर्ष 800 लोग अपने पूरे लावलश्कर के साथ माऊंट एवरेस्ट पर चढ़े थे। इस साल अब तक 600 लोग एवरेस्ट से लौट चुके हैं। इस साल कुल 500 विदेशी पर्वतारोहियों के साथ 1000 से ज्यादा उनके सहायक कर्मियों को भी माऊंट एवरेस्ट जाने का अनुमान है। माऊंट एवरेस्ट पर चढ़ने वालों में ज्यादातर धनी पर्वतारोही होते हैं, जिन्हें वहां के पर्यावरण की बिल्कुल चिंता नहीं होती। वे केवल अपने सैरसपाटे के उद्देश्य से ही वहां जाते हैं, जो अपने साथ टेंट, तमाम पैकेटबंद खाने-पीने का सामान, अनेक उपकरण, गैस सिलेंडर आदि लेकर जाते हैं। माऊंट एवरेस्ट के मार्ग पर वे हर जगह अपने साथ ले गए सामान की उपयोगिता समाप्त होने पर वहीं छोड़ आते हैं। इस प्रकार पूरा हिमालय ऊपर से नीचे घाटी तक कूड़े के एक बहुत बड़े ढेर में तब्दील होता जा रहा है। नेपाल सरकार ने अपने 45 दिनों के एवरेस्ट सफाई अभियान के तहत 10,000 किलोग्राम कूड़ा इकट्ठा कर नीचे लाने का लक्ष्य निर्धारित किया है। इस समग्र कूड़े को काठमांडू में इकट्ठा करके 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस पर दुनिया भर के लोगों को दिखाया जाएगा। कितने दुख की बात है कि पृथ्वी के पर्यावरण के साथ कितनी तेजी से मानव प्रजाति छेड़छाड़ कर रहा है, इसका यह एक छोटा सा ज्वलंत उदाहरण मात्र है।

निर्मल कुमार शर्मा, प्रताप विहार, गाजियाबाद

निराश्रितों को मिले राहत

हर साल गर्मी के रिकॉर्ड टूट रहे हैं। जिस तरह से अभी से दिल्ली में गर्मी का प्रकोप बढ़ रहा है, उससे लगता है कि मई और जून के महीने में भीषण गर्मी पड़ेगी। दिल्ली में बड़ी संख्या में निराश्रित लोग भी रहते हैं, उन्हें गर्मी से बचाने के लिए सरकार को इंतजाम करने चाहिए।

विजय कुमार धनिया, नई दिल्ली

चुनाव में सोशल मीडिया

सोशल मीडिया का उपयोग, लोगों को जोड़ने के साथ ही उनकी राजनीतिक विचारधारा और मन बदलने में भी किया जा रहा है। इसके लिए, बड़े पैमाने पर भ्रामक और भड़काऊ पोस्ट बनायी और फैलायी जाती है। ये हैकर, किसी की सोच को हैक करते हैं। जागरूक, सतर्क और जिम्मेदार नागरिक होने के नाते हम सभी का कर्तव्य है कि ऐसी किसी भी आपत्तिजनक पोस्ट को न तो शेयर करें और न ही लाइक। एक चतुर मतदाता वही है जो अपने मतदान की मंशा को जाहिर न करे।

sonimohit895@gmail.com

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 23359961-62, नोएडा कार्यालय : 0120-3915800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721
न हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय धीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।